NOVATEUR PUBLICATIONS
JournalNX-A Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN No:2581-4230
VOLUME 2, ISSUE 12, Dec. -2016

Dr. Lajvanti
Department of Hindi
Govt. College Nahar, Haryana

पं० लखमीचन्द के सांगों में चित्रित प्रेम व कर्म का महत्त्व

Abstract

वैसे तो जीवन का बीज रूप से लेकर वृक्ष–रूप में विकसित होने तक, समस्त प्रक्रियाएं आनन्दमयी अनुभूति की यात्रा है और इनके साथ माँ प्रकृति का मनोहारी अभिव्यंजन भी है, परंतु जीवन रूपी वृक्ष की वह स्थिति, जहां पत्तों पर पुष्प–मंजरी का आगमन होता है और फूलों की सुगंध जन्म लेती है, मानव जीवन का सर्व–आनन्दमयी प्रकरण है। इसी स्थिति को काव्य में प्रेम सौंदर्य कहा जाता है। भारत का पौराणिक और प्राकृत साहित्य प्रेम और सप्रेम और प्रणय, प्रेम और सौंदर्य, मिलन–उत्कंठा और प्रेमी–मिलन के उल्लास और प्रेम–विरह के आंसुओं से भरा पड़ा है।

Introduction

इसी श्रृंखला में पंडित लखमीचन्द भी प्रेम–भावों के सशक्त चितेरे हैं। इसीलिए तो लखमीचन्द के श्रोता–दर्शन हूर–मेनका, शकुन्तला, पद्मावत, बीना, सोमवती, दमयन्ती आदि नायिकाओं का पूर्ण वर्णन उनके सांगों में हुआ है उसे देखकर सुनकर सहज ही बोल उठते हैं,

‘रै दादा नै बान्ध्य कै गेर दिए’

पंडित लखमीचन्द के सांगों में प्रेम का वर्णन ईश्वर के प्रति प्रति हुआ है। पंडित जी ने कहा है कि अगर प्रेम करना है तो ईश्वर से करो :–

ईश्क करै तै हर से लावै तै लौ लाया कर।
पीवै ते पी प्रेम रस खावै तै गम खाय कर ॰
तजै जै तज तृष्णा को राखै तै कुछ राख शर्म।

त्यांगै तै कुकर्म को त्याग मेटै तै तूं मेर भ्रम।
पढे तै पढ़ गीता हो सीखै तो कोए योग कर्म।
छोड़ै तै तूं छोड़ पाप दे मानै तै ले मान धर्म।
करै तै जप–तप भजन दान नित अतिथियों पै छाया कर ꠰꠰

इस जीव देह का निर्माण अग्नि, पानी, वायु, पृथ्वी, आकाश पांच तत्त्वों से मिलकर बना है और इन पांच तत्त्वों से मिश्रित शरीर का निर्माण उस कारीगर ने किया है जो इस सृष्टि का पालनहार है जिसे वेदों में, पुराणों में परमात्मा, परमेश्वर, ईश्वर, नियामक, सृष्टा आदि न जाने कितने नामों से पुकारा जाता रहा है। ईश्वर ने जीव देह को उस कुशल कारीगर की तरह बनाया है, जो सर्वोत्तम किलों और भवनों का निर्माण करता है। ईश्वर ने एक सर्वोत्तम किले के समान ही इस जीव देह का प्रबंधन किया है।

पंडित लखमीचन्द जी ने अपने एक भजन में जीव देह का किले के रूप में सुन्दर वर्णन किया है तथा उस कारीगर की कला की प्रशंसा इस प्रकार की है :–

तेरा कारीगर बलवान है जिसने यू किला बणाया ꠰꠰
तेरे किले की चीज गिणा द्यूं दर दरवाज ला राखे।
32 सड़क 72 कोठी नल पाणी के ला राखे।
72 कमरे तेरे किले मैं सब मैं फर्श बिछा राखे।
नौ दरवाजे आंख्या देखे दसवें दरवाजे का कोए तोल नहीं ꠰꠰
जो टहले दसवां दरवाजा उस माणस का माल नहीं।
चाल्या जो बैकण्ठपुरी को इसमैं कोए मखौल नहीं।
तेरा किला बण्या अलिश्यान है पर ना दरवाजा वायश
32 सड़क 72 कोठी दसवें दरवाजे मैं तार।
गंगा जमना सरस्वती त्रिवेणी की चालै धार
किला देखणा चाहवै सै तै अपणा घोड़ा कर तैयार।
जै घोड़ै नै करड़ा राखै सब दरवाजै जाण देगा।
पवन वेगी घोड़ा छूटै कत्ती किले नै छाण देगा।
जै दरवाजा देख लिया तै दिखाई कुल प्रमाण देगा।
किला बण्या धरती असमान मै कुछ सहज नहीं सै माया ꠰꠰12꠰꠰
इन तै आग लिकड़े पाछै भय के रस्ते आवैं।

भूत प्रेत सांप जित तनै भगे खाण नै आवैंगे।
नौ दरवाजां के माणस तनैखूब बह कावैगे ꣸
जूणसे खड़े सैं पहरेदार वैं जाण तै हटावैंगे।
किसे तै भी डरिएमतना कदे डरते का कांपै रात।
दसवें दरवाजे कै रस्ते चलता रहित दिन और राज
जो रस्ते मैं तनै मिलैंगे उन तै मतना किरए बात।
तूं सुण ले खोल कै कान कदे ना जा उल्टा ताहया ꣸

हिन्दुओं में गऊ के प्रति सम्मान का भाव कूट—कूट कर भरा हुआ है। हमारी प्राचीन संस्कृति में गऊ को 'पूजार्ह' कहा है। इसी कारण हिन्दू गऊ को माता कहते हैं। गऊ का पालन—पोषण हिन्दुओं ने परम—धर्म माना है।

भारत कृषि प्रधान देश है इसलिए गऊ का महत्त्व प्राचीन काल से ही रहा है। पुराने ग्रंथों में तो गऊ के विषय में यह तक कहा गया है कि जहाँ पर गाय का दूध पीया जाता है वहीं तक भारत है। ग्रामीण लोग आज भी अपनी बात की सच्चाई का दावा करने लिए गऊ की कसम उठाते हैं।

पंडित लखमीचन्द ने अपने भजनों में गऊ के महत्त्व का सुन्दर वर्णन किया है तथा गऊ माता के प्रति सच्ची श्रद्धा प्रकट की है जैसे :—

जंगल मै कै चरण चली लग गऊ माता की लार।
एक गऊ कै दस बेटी थी दसां का परिवार ꣸
ब्रह्म का ज्ञान हृदय मैं भरकै, देवता रट्या करैं ये चित्त धर कै।
गऊ के दूध से यज्ञ करकै यो रच्या गया संसार ꣸1꣸
जब सृष्टि रचणे की जची, चौरासी लाख मूर्ति खिंची।
सब से पहले दूब रची जो गऊ के खाण का न्यार ꣸2꣸
गऊ जंगल मै चर्या करै थी, ध्यान पानी का धर्या करैथी।
जी चाहे जित चर्या करै थी कर आपस मैं प्यार ꣸3꣸
कहै लखमीचन्द धर्म की साख उठल्यी, अनर्थी बणग्ये आंख्य फुटल्यी।
यज्ञ हवन तप दया छूटल्यी न्यूं मींह बरसण की हार ꣸

इस प्रकार से पंडित जी सृष्टि की रचना में गाय के दूध का योगदान मानते है। एक अन्य भजन में पंडित लखमीचन्द ने भारत के नर

और नारियों को गऊ की सेवा करने के लिए सम्बोधित किया और गऊ माता की महिमा का गुणगान किया है :

गऊ माता की सेवा किरयो भारत के नर नारी।
चारों वेद बड़ाई करते ऋषि मुनि ब्रह्मचारी ꠰꠰
तेतीस करोड़ देवता सारे गऊ माता में रहते।
तेतीस करोड़ देवता हों वे भली–बुरी तै लहते।
उपनिषद और मनुस्मृति छः हो शास्त्र कहते।
गऊ माता के ह्रदय में सात–समुंद्र रहते।
कोए दूध का कोए शहर का कोए घी का कोए खारी ꠰꠰1꠰꠰
पीठ मैं बासा विश्वकर्मा का पेट मैं सन्त कवारा।
पूड्या मैं बास लक्ष्मी जर का भेद बतद्यू सारा।
चारों क्षण धर्म के खम्बे बहती अमृतधारा।
अगन देवता करै ताड़ना गऊ खाती है चारा।
नाभि धोरै बसै पृथ्वी जाणै दुनिया सारी ꠰꠰

साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक नारी मुख्य विषय रही है। हमारी साहित्य में नारी को लेकर अनेक रचनाओं का सृजन हुआ है। साहित्य में नारी का विशद वर्णन मिलता है। 'रामायण', 'महाभारत' से लेकर 'कामायनी', यशोधरा तक नारी हमारे कवियों के आकर्षण का केन्द्र रही है।

लोक साहित्य में भी नारी वर्णन भरपूर मिलता है। अनेक लोक कवियों ने नारी के विभिन्न रूपों का प्रभावशाली वर्णन किया है।

नारी के विभिन्न रूपों तथा नारी भावना का जितना विशद एवं विविध विवेचन पंडित लखमीचन्द ने अपने काव्य में किया है, उतना हरियाणा के किसी अन्य लोक कवि ने नहीं किया। लखमीचन्द काव्य में नारी के विभिन्न रूपों एवं पक्षों को अत्यन्त प्रभावपूर्ण ढंग से उद्घाटित किया गया है। इसमें एक ओर जहां नारी के उज्जवल चरित्र का सुन्दर अंकन हुआ है, वहां दूसरी ओर कतिपय त्रुटियों का रेखांकन भी।

पंडित लखमीचन्द ने अपने एक भजन में नारी के विभिन्न रूपों का सुन्दर वर्णन किया है, जो इस प्रकार से देखा जा सकता है :–

कई तरां की बीर बताई न्यारी–न्यारी हों।
के बड़ी के छोटी जहर मैं लटपट सारी हों ꠰꠰

बारा वर्ष तै ऊपर ब्याही चाहें कवारी हों ऽ
चुडैल शीतलना और डंकणी यही सिहारी हों।
टूणे टोटके करती होण्डै घर–घर सारी रात।
हे मालिक तनै तारी लुगाई दुनिया मै अलामात ऽ2ऽ
बेटी इज्जत शिखर चढ़ा दे और बेटी एक तार दे।
बेटी जिन्दगी सफल बना दे और बेटी ए मार दे।
माता–पिता और सा ससुर नै पर ले पार तार दे।
वा लूखी–सूखी खा कै अपणी उमर गुजार दे।
ना तै भरी खरी की थाली कै या तुरत मार दे लात।
ना चाहिए पीहर सासरा ना छूछक ना भात।

पंडित जी ने एक स्थान पर सती की प्रशंसा इस प्रकार से की है:–

छत्तीस प्रकार के भोजन सती के टूक मैं हो सैं।
राम लखन श्री कृष्ण से इनकी कूख मै हों सैं ऽ

पंडित लखमीचन्द जी ने अपने एक अन्य भजन में उन पुरुषों का वर्णन किया है जो त्रिया चरित्र में फंस गये थे और उनकी क्या दुर्दशा हुई, जो इस प्रकार हे :–

पर त्रिया और नागिन काली झपट करैं सैं पूरी।
जिन–जिन नै इनकी करी सोहबत सोहब मिलग्यी सजा जरूरी ऽ
सीता की मुहब्बत मैं एक दिन हुआ लंक पुरी मैं रासा।
मुनि उद्दालक जमदग्नि और शृंगी ऋषि दुर्वासा।
हुर मेनका विश्वामित्र का करग्यी तोड़ खुलासा।
छोड़ फकीर के धन्धे नै बसा लिया घरवासा।
भगमां बाणा बगा दिया और लीन्हीं कटा लटूरी ऽ
इन्द्रणी की सोहबत मैं नहुष नै राज स्वर्ग का खोया।
ऋषियां कान्धै चढ़ माल्या जिसनै बीज पाप का बोया।
गोरां की सोहबत मै भस्मासुर भस्म अचानक होया।
चन्द्रमा नै सोहबत खोग्यी दाग मिट्य नहीं धोया।
हीर की सोहबत मैं रांझा करता फिरता मजूरी।

कुछ भी हो पंडित लखमीचंद ने अपने सांगों में नारी चरित्र के उज्जवल और धूमिल दोनों पक्षों के बड़े सार्थक चित्र उकेरे हैं।

भारत में वर्ण व्यवस्था सर्वप्रथम 'मनुस्मृति' में देखने को मिलती है। यह व्यवस्था समाज को व्यवस्थित रखने के लिए कर्म के आधार पर की गई थी, लेकिन बाद में इस व्यवस्था की सीमाएं संकुचित होती गई। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अब वंश के आधार पर होने लगे। वर्ण–व्यवस्था कट्टर और आडम्बर पूर्ण होती चली गई कर्मों का कोई महत्त्व नहीं रहा। इसका परिणाम सामाजिक विघटन के रूप में व्यक्त हुआ।समाज में अनेक जातियों उपजातियों का प्रसव होता चला गया। इसमें निम्न वर्ग (शुद्र) की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गयी।

लोक कवि पंडित लखमीचन्द ने ऐसी वर्ण–व्यवस्था का तिरस्कार किया है। उन्होंने कहा है कि किसी जाति विशेष में जन्म लेने के कारण मनुष्य छोटा–बड़ा नहीं बनता है मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार ऊँचा या नीचा बनता है। उन्होंने देखा कि किसी तरह एक लोभी, पाखण्डी, अनपढ़, कुकर्मी ब्राह्मण वंश में जन्म लेने से ब्राह्मण कहलाता है, जबकि एक शूद्र का विद्वान पुत्र समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। इसलिए उन्होंने अपने सांगों के एक भजन में वर्ण व्यवस्था का विरोध करते हुए कर्मों का महत्त्व बताया है और ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किए है। जो निम्न वर्ग से संबंधित पुरुष अपने कर्मों द्वारा महान कहलाए तथा उच्च वर्ग के पुरुष अपने ओछे कर्मों के कारण समाज में हेय दृष्टि से देखे गएः–

ऊँच नीच कर्मों से होतो यों वेदों नै फरमाए।
जन्म जात का जोर चलै ना कर्म ही बड़े बताए ऌ
बाल्मीकि नै कर्या कर्म भील का इसलिए भील कुहाग्या।
शिक्षा लागी सप्त ऋषियें की करण तपस्या लाग्या।
भीलां आला काम छोड़ दिया महर्षि की पदवी पाग्या।
ज्ञान विज्ञान शास्त्र पढ कै खुद रामायण बणाग्या।
सेवन पूजन भजर करे नित ईश्रव के गुण गाए ऌ1ऌ
काली दास गडरिए का लड़का उसकी सुणो कहाणी।
धोखा दे पण्डितों नै ब्याहदी भोज की कन्या स्याणी।
शिक्षा मानी विद्याधर की पढणी ठाणी।
चार वेद छः शास्त्र के या पण्डित होग्या था ज्ञानी।

एक और अन्य स्थान पर पंडित जी ने वर्ण व्यवस्था का विरोध करके कर्मों की महत्ता को अंकित किया है :–

कहै लखमीचन्द जिसे कर्म करेगा वैसा ही फल पाणा।
शैयन भगत और सदन कसाई सदा ईश्वर के गुणगाण।
नींच कुलों मैं पैदा होग्ये चाल्याना धिंग ताणा।
रविदास और कबीर दास नै जाणैं सभी जमाना।
कर्मों कारण पार उतरग्ये ये दोनों जात जुलाए ॥

पंडित लखमीचन्द ने अपने सांगों में कुटिल बुद्धि नारियों की तरह नकारे मर्दों का भी वर्णन किया है। पंडित जी ने कहा है कि नकारे व्यक्ति बड़े स्वार्थी होते हैं, जब इन पर कोई विपत्ति आती है तो अपने ईमान तक का त्याग कर देते हैं।

पंडित जी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से उन इतिहास पुरुषों के निकम्में कार्यों का वर्णन किया है जो हमारे भारतवर्ष में देवता तुल्य माने जाते हैं। जो इस प्रकार से हैं :–

देखे मर्द नकारे हों सै गर्ज–गर्ज के प्यारे हो सैं।
भीड़ पडी मै न्यारे हो सैं तज के दीन ईमान नै ॥
जानकी छेड़ी दशकन्धर नै, गौतम कै गया के सोची इन्द्र नै।
रामचन्द्र ने सीता ताहदी, गौरां शिवजी ने जड़ तैं ठादी ॥
हरिश्चन्द्र नै भी डायण बतादी के सोची अज्ञान नैं ॥1॥
मर्द किस–किस की ओड़े घालदे, डबो दरिया के सी झाल दे।
निहालदे मेनपाल नै छोड़ी, मलग्यी घाल धर्म पै गोडी।
अनसूइया का पति था कोढी वा डाट बैठग्यी ध्यान नै ॥2॥
मर्द झूठी पटकै सै रीष, मिले जैसे कुब्जा से जगदीश।
महतो न शीश बुराई धरदी, गौतम न हो कै बेदर्दी।
बिना खोट पत्थर की करद्यी, खो बैठी प्राण नै ॥

जब मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सत्य को छोड़कर अन्य साधनों का प्रयोग करने लगता है, तो वह पाखण्ड कहलाता है।

पण्डित लखमीचन्द को सच्चे ज्ञान और भक्ति में जितनी अगाध आस्था थी, उससे भी बढ़कर पोंगा–पंथी एवं झूठा आडम्बर करने वाले जिह्वा–लिप्सु (चटोरे) पिंड–पोषी साधुओं से चिढ़ थी। ऐसे ढोंगी योगियों को आड़े हाथों लेते हुए उन्होंने पद–पद पर उनका कच्चा चिट्ठा खोलने का प्रयास किया है। इसी संदर्भ में उनका यह कथन कितना सटीक एवं सारगर्भित है :–

सखी भक्ति का ढंग निराला, उन बन्द्यां का मुंह काला।
जिनके हाथ मैं माला और पाप रहै मन मै ऽ
उठो–उठो हे सखी लगो हरि भजन मैं ऽ

ढोगी और पाखण्डी योगियों पर उन्होंने डटकर प्रहार किए हैं। बाहरी दिखावे को अनावश्यक बताते हुए उन्होंने सच्चे योगियों के ज्वलंत प्रमाण देकर सिद्ध करने का प्रयास किया है कि योग–साधना के लिए भगवे वस्त्र पहनना, मुण्ड मुडाना, जटा बढ़ाना और कान पड़वाना अनिवार्य नहीं है। भीष्म औरकृष्ण भगवान ने सांसारिक कर्त्तव्यों को निभाते हुए भी योग का अनूठा आदर्श प्रस्तुत किया है। घर–घर अलख जगाने वाले अज्ञानी एवं धूर्त साधुओं की उन्होंने खूब खबर ली है। उन्हें कुत्तों के समान भौंकने वाले बताकर इस प्रकार तिरस्कृत किया है :–

जिन नै ना योग क्रिया का ज्ञान, नफा के कान पड़ावण तै ऽ
के फैदा न्यूए मरे तै, परे तै आया न्यूंए चल्या जा उरे तै।
डटज्या सेवा करे तै ध्यान, समझकै गुरु बणावण तै ऽ1ऽ
गाड ले ज्ञान रूपी की धूणी, तोड़ दे मोह ममता की जूणी।
ना तै होज्या दूणी अकल विरान, टांट पै जटा बधावण तै ऽ2ऽ
भीष्म योगी घर पै रह्या, कान पड़ाए ना बण मैं गया।
योगी कहा कृष्ण भगवान, हट्या कद रास रचावण तै ऽ3ऽ
लखमीचन्द गुण खोस्या करैं, मोह ममता नै मोस्या करै।
ना तै न्यूंए भोस्या करैं श्वान, घर–घर अलख जगावण तैऽ4ऽ

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ० गुणपाल सांगवान : हरियाणवी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1989
2. गुलाब राय : भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, साहित्य मन्दिर, ग्वालियर, 1962
3. गुलाब राय : भारतीय संस्कृति, रविन्द्र प्रकाशन, पाटन बाजार, ग्वालियर, 1975

4. गंगा प्रसाद विमल : आधुनिकता साहित्य के संदर्भ में, दि मैककमलन कम्पनी ऑफ इण्डिया, प्रा० लि० दिल्ली, प्रथम सं० 1978
5. डॉ० जगदीश गुप्त : नई कविता, स्वरूप और समस्याएं, शाही विजयदेव नारायण, आला किताबमहल, 1959
6. डॉ० जगदीश नारायण : हरियाणा प्रदेश के हरियाणवी लोकगीतों का सामाजिक पक्ष, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1989
7. जयनाथ नलिन : साहित्य का आधार दर्शन, आलोक प्रकाशन, भिवानी, प्रथम सं० 1977
8. डॉ० जयभगवान गोयल : पुरातत्त्व इतिहास व संस्कृति, साहित्य एवं लोकवार्ता, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1996
9. डॉ० जयसिंह 'नीरद', दिनकर के काव्य में परम्परा और आधुनिकता, अनुराधा प्रकाशन, मेरठ, प्रथम सं० 1984
10. डॉ० दशरथ ओझा : हिन्दी नाटक का उद्‌भव और विकास, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
11. दुर्गा दीक्षित : नाटक और नाट्‌य शैलियां, आला साहित्य भवन, 1975
12. डॉ० देवराज : प्रतिक्रियाएं, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं० 1968
13. देवीशंकर प्रभाकर : हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन, उमेश प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं० 1983